CREATIVE WRITING

37

रोशनी का तूफ़ान

डॉ. घनश्याम ह. आसुदानी
सहायक प्राध्यापक,
आनंद निकेतन कृषि महाविद्यालय,
वरोरा, जिला चंद्रपुर

सपने देखना शायद हमेशा से इन्सान की ि तरत रही है| वह सपने देखता है, उनके पीछे भागता है, कभी कुछ खोता है तो कभी पाता है, कभी तो यह सपने टूट कर बिखर जाते है तो कभी वह उन्हें साकार भी करता है|

जवानी की दहलीज पर कदम रखते ही नेहा ने भी कुछ सपने सजाए थे| बहुत बड़े या बहुत अलग नहीं थे वे| एक साधारण सी लडकी की साधारण सी इच्छा भर|

छोटा सा घर-आँगन; बहुत-सा प्यार करने वाला जीवनसाथी तथा दो वक्त की सुख-चैन की रोटी| इसी में देखती थी वह अपना सारा संसार|

शुरू से ही वह पढ़ने में साधारण छात्रा ही रही थी| पिताजी की आमदानी भी बहुत अधिक न थी| आठ भाई बहनों में वह सबसे छोटी थी| दसवी कक्षा पास कर उसने कॉलेज में कदम रखा तो मानो उसकी दुनिया ही बदल गई| अभी तक जो सब कुछ घर और स्कूल की चार दिवारी में कैद था उसे मानो अब खुली हवाओं में सास लेने की आजादी मिल गई थी| उसने समझा और जाना कि घर और स्कूल से अलग एक पूरी दुनिया है| इस दुनिया मे कई ऐसी चीजे हैं जिन्हें देख कर के उसे लगा मानो वे सब उसी के लिए बनी थीं|

शहर के बड़े-बड़े रस्ते, बसों में आते-जाते हुए कई खट्टे-मीठे अनुभव, कॉलेज में पढ़ाए जाने वाले नए-नए विषय, कम्प्यूटर के चमत्कार, नए-नए मित्रों का साथ, हर सप्ताह होने वाली मित्रों की पार्टियाँ, पिकनिक तथा इन सबसे हटकर उसका धीरज|

हाँ, धीरज ही था उसका नाम| ऊँचा कद, छरहरा शरीर, मधुर आवाज, धीरगंभीर मुद्रा, प्रगल्भ ज्ञान, अतुलनीय तर्कशक्ति, हँसमुख स्वभाव और इन सबसे भी ब□कर थी उसकी प्यारीं सी मुस्कान| नेहा ने जब उसे पहली बार देखा तो बस देखती ही रह गई| उस नव यौवना ने जो सपने सजाए थे कुछ ऐसा ही तो नहीं था उसमे? नहीं-नहीं| अभी तो कलियाँ पूरी खिली भी नहीं थीं| बहारों के आने में शायद समय था अभी| उसका पूरा भविष्य था उसके सामने| उसे बहुत मेहनत करनी थी| उसे जीवन में कुछ कर दिखाना था| उसका सबसे पहला उद्देश्य था, अपने पैरो पर खड़े होकर स्वावलंबी बनना| उसने गरीबी की पीड़ा देखी थी| अभाव का भी अभ्यास था उसे| वह नहीं चाहती थी की उसका भावी जीवन भी अभाव के उन काँटों से क्षत-विक्षत रहे| पर □र सोचती कि वह अकेली यह सब कैसे कर पाएंगी| कभी-कभी वक्त की रफ्तार से उसे डर सा लगने लगता| लगता मानो उसके हाथों से कुछ छूटता सा जा रहा है| वह अकेली पड़ गई है| कोई उसका साथी नहीं है| चलती □रती भीड़ में भी स्वंय को वह अलग-अलग, कटा-कटा सा पाती|

घर मे सभी अपने-अपने काम में व्यस्त रहते| तो कॉलेज में सबने अपनी-अपनी दुनिया बसा ली थी| उसे लगता मानो उसकी मंजिल ही कई धूमिल सी होती जा रही है| सोचती काश, कोई होता जिसे वह अपना समझती! दुख दर्द बॉटती| जो उसके साथ हँसता और जिसके कंधे पर सर रख वह रो भी लेती| वो डगमगाती तो कोई उसका हाथ थाम लेता| वो लड़खड़ाता तो वह स्वंय उसे अपने आँचल की छाँव देती| उसे सारी दुनिया से बचाकर, छिपाकर रख देती| पर यह तो सारे ख्वाब थे खयाली| कहाँ पाएंगी वह ऐसा साथी?

धीरज से उसकी पहली मुलाकात बस स्टाप पर हुई थी| वो कॉलेज का पहला ही दिन था| धीरज के हाथ में एक स□द छड़ी थी जिसका निचला हिस्सा लाल रंग का था| उसे बड़ी मुस्तैदी से अपने सामने दोनों और घूमाँता हुआ रास्ते में आने वाली सारी बाधाओं से बचता हुआ वह बस स्टाप पर आ खड़ा हुआ था| नेहा कुछ समय तो बुत बनी उसे देखती ही रही| पहले तो उसे समझ ही नहीं आया की वह बाँका नौजवान हाथ में छड़ी क्यों थामे था| कुछ देर उसकी ओर

टकटकी लगाए देखती रही| तब उसने जाना की वो उसकी तर नहीं देख रहा था|उसकी खुली आँखो में अँधेरे का साम्राज्य था| निष्ठुर विधाता उसकी आँखो मे ज्योत जगाना भूल गया था|

बस आयी तो वह बड़ी चपलता से अपनी छड़ी घुमाता हुआ खाली सीट देखकर वहाँ बैठ गया| नेहा मानो किसी अदृश्य शक्ति से बंधी उसके पीछे-पीछे चलती जा रही थी| न जाने क्या था उस अजनबी में जो चाहकर भी वह उससे दूर नही हो पा रही थी| वह मानो यंत्रवत-सी उसकी समीप वाली सीट पर जा बैठी| सोच रही थी की इसने तो यह भी नहीं जाना होगा की उसके पास कौन आ बैठा है| हजार-हजार सवाल मानो उसके मन को मथ रहे थे| कैसे पढ़ता होगा?! कैसे लिख पाता होंगा?! कैसे अकेला ही इस भीड़ को चीरता हुआ अपना मार्गक्रमण कर पाता होगा?! कैसे दुनिया का छल-कपट पहचान पाता होगा?! कैसे देख पाता होंगा अँधेरे के पार?! कैसे होंगे उसकी आँखो के सपने?!

ऐसे ही खयालों में खोई थी की कॉलेज का बस स्टाप आ गया| सारे छात्र बस से उतरने की हड़बड़ी मचाने लगे| इन सब के बीच धीरज भी उठकर उतरने के लिए दरवाजा टटोलने लगा| नेहा ने जाने क्या सोचकर बरबस ही उसका हाथ पकड़ लिया| हौले से उसे उसने बस से नीचे उतरने में मदद की| िर वह हाथ थामे उसे कॉलेज की ओर ले गयी| धीरज ने ही पहल की और पूछा, "आप कौन है? आपका नाम क्या है?" नेहा मानो किसी तन्द्रा से जागी| संकुचाकर उसने अपना हाथ खींच लिया और झेंपते हुए बोली, "जी, मेरा नाम नेहा है|" "मैंने इसी कॉलेज में प्रवेश लिया है| बस में बहुत भीड़ थी इसलिए .....|"

"मेरा नाम धीरज है| मैंने भी इसी कॉलेज में प्रवेश लिया है| मैं आपकी मदद के लिए आपका बहुत आभारी हूँ|" इसपर वह इतना भर बोल पाई की यह तो मेरा कर्तव्य था|

िर तो यह रोज का नियम-सा बन गया कि दोनों बस स्टाप पर मिलते तथा साथ-साथ कॉलेज आते| लौटते समय भी वे साथ ही जाते| धीरे-धीरे दोनों के मन में एक अंकुर-सा ूट चला| दोनों की समझ से परे कहीं दूर सपनों के देश में कोई सुरीली शहनाई सी बज रही थी, जिसे दोनों अपने अंतर्मन में महसूस कर रहे थे|

बड़ी मीठे और लुभावने थे वे शहनाई के स्वर| जाने क्या छुपा था उन अदृश्य स्वरों में| भविष्य के गर्भ में छुपी किस बात की ओर संकेत कर रहे थे वे? कोई नहीं जनता था|

किसी दिन धीरज न आता तो नेहा उदास हो जाती, अकेली पड़ जाती| जैसे-तैसे दिन बीता वह दुसरे दिन की बाट जोहने लगती| धीरज आता तो उसे एक संपूर्णता का एहसास होता| वह कई बार टकटकी लगाकर धीरज की आँखो की ओर देखने लगती| पर वहा उसे दिखाई देता था केवल चिर अन्धकार| बिना आँखो के सम्पूर्ण संसार की कल्पना मात्र से वह सिहर सी उठती थी| संसार के सारे ही तो काम आँखो से चलते है| प्यार,मनुहार,रूठना, मनाना, हसना, रोना क्या नहीं होता इन आँखो से! बिना आँखो के क्या रह जाता है संसार मे एक अँधेरे के सिवा?

समय अपनी रफ्तार से आगे बढ़ता रहा| धीरज और नेहा भी मंजिल दर मंजिल तय करते गए| स्नातकोत्तर परीक्षा में धीरज ने विश्वविद्यालय में प्रथम स्थान पाया| नेहा का धीरज के प्रति प्यार ज्यों का त्यों बना हुआ था| पर इन सब सालों में उसके मन की बेचैनी कहीं से कम न हुई थी| आते जाते उसे लगता मानो हजार हजार जोडी आँखे उसे घूर-घूर कर देख रही हैं| वह जिधर देखती उधर उसे आँखे ही आँखे दिखाई देती| उन आँखों में थे सहस्त्रों सवाल| ऐसे सवाल जिनका उत्तर उसके पास नहीं था| वह जो दुनिया बसाना चाहती थी वह अँधेरे की थी| जीवन भर किसी अंधे की लाठी बन कर कैसे जी सकता है भला कोई?

निर्णय की घड़ी अब दूर न थी| वह जानती थी कि किसी दिन उसे धीरज को उत्तर देना होंगा| परन्तु वह खुद को ही अभी कहाँ उत्तर दे पाई थी| जीवन की हर छोटी बात से लेकर भावनाओं की अभिव्यक्ति तक आँखो का ही साम्राज्य दिखाई देता उसे| दैनदिन जीवन की छोटी बड़ी आवश्यकताओं से लेकर एक दूसरे की आत्मा को समझने तक सब कुछ अँधेरे में करना होंगा उसे| उसकी दो आँखे कहा तक झेल पाएंगी किसी के सम्पूर्ण जीवन के चिर अंधकार को|

बहुत समझाने पर भी उसका मन न मानता| वह बार-बार आँख वालो की ओर दौड़ जाता| रोशनी की एक सम्पूर्ण जगमगाती दुनिया उसे इशारे करने लगती| पर इन सबसे परे एक क्षीण-सा नक्षत्र उसे अपनी मौन वाणी से आवाज दिए जाता| कभी तो यह आवाज इतनी तेज हो जाती की उसके कानों के परदे ही □टने लगते| एक ही सवाल जिसका उत्तर वह पिछले कई वर्षों से खोज रही थी| क्या दुनिया में आँखे ही सबकुछ हैं? या आँखो से परे भी बसती है कोई दुनिया? क्या एक व्यक्ति का सम्पूर्ण व्यक्तित्व केवल दो आँखों से बनता है? क्या आँखो के सिवा भी भावनात्मक, बौध्दिक, सांस्कृतिक तथा शारीरिक इन सभी स्तरों पर एक स□ल वैवाहिक जीवन जिया जा सकता है?

कभी सोचती की धीरज के सामने अपने मन की गुत्थी खोल कर रख दे| पर िर विचार आता की निर्णय तो उसे लेना था धीरज को नहीं| धीरज तो अपनी बाहें पसारे उसका स्वागत करने हेतु सदा-से तैयार था| प्रकृति ने उसे जो नहीं दिया था उसका न तो उसे खेद था न कोई शिकायत| उसने तो जो था उसके बलबूते ही अपना संसार खडा कर लिया था| अपनी छड़ी के सहारे ही उसने अपना मार्ग तलाश लिया था| उसे तो किसी के आश्रय की आवश्यकता ही न थी| वह तो चाहता था केवल कदम से कदम मिलाकर चलनेवाला कोई साथी| उजालों की इस दुनिया से ऐसा कोई साथी उसे मिलेंगा या नहीं, यह तो वह नहीं जनता था| नेहा थी जरुर, पर जीवन के अंधेरो से दो-चार होकर वह अपने उजाले उसके साथ बाँट पाएंगी कभी.....?

नेहा अक्सर इन्हीं विचारों में खोई-खोई सी रहती| इस बीच धीरज को एक महाविद्यालय में शिक्षक की नौकरी मिल गई| उसने सबसे पहले यह बात ोन पर नेहा को ही बताई| दूसरे दिन अपने चिर-परिचित पेड़ के नीचे मिलने का वादा भी ले लिया|

नियत समय से बहुत पहले ही आज नेहा उस चबूतरे पर आकर बैठ गई| बहुत देर तक वह यूं ही शून्य में आकाश की ओर ताकती रही| वह समझ रही थी, उसकी परीक्षा की घड़ी समीप आ रही थी|

आज अँधेरे और उजाले के बीच ठन गई थी शायद| एक ओर थी उसकी अपने ईश्वर के प्रति आस्था, स्वंय के प्रति विश्वास तथा धीरज के प्रति समर्पण की भावना| तो दूसरी ओर थी जीवन के उतार चढ़ाव से भरी पगडंडी, जहा उसे अंधेरो का सारथी बन यात्रा करनी थी| इसी तरह का ी समय बीत गया| धीरज के आने का वक्त हो चला था| अचानक उसकी नजर दूर एक पेड़ पर बैठी चिड़िया पर पडी| वह इधर उधर से कुछ तिनके इकठ्ठे कर अपना घोंसला बना रही थी| पर तेज हवा का झोंका आते ही सारे तिनके इधर उधर बिखर जाते थे| वह िर उसी मुस्तैदी से तिनके जमा कर अपना आशियाना खड़ा कर देती| िर हवा का कोई निष्ठुर झोंका उसके संसार को उजाड़ देता| इस तरह कई बार उसने अपने नीड़ का निर्माण किया| उसकी आस्था, विश्वास में तिल भर की कमी तक नहीं आई थी| नेहा बड़े आश्चर्य से नन्हीं चिरैया के उस बनते-बिगड़ते संसार को निहार रही थी|

तभी उसे दूर से छड़ी की आवाज सुनाई दी| वह समझ गई धीरज आ रहा था| चिरैया का वह घोंसला उसके मन मस्तिष्क में बनने लगा| जाने किस विश्व से उसे हवा के तेज झोकों की पदचाप भी सुनाई देने लगी|

बहुत बड़ा बवंडर था वह| उसके सारे संसार को ही मानो कुचलकर धराशायी कर देंगा| उसकी आँखो में मानो सहस्त्रो सूर्यों का तेजप्रकाश चिरकर प्रवेश करने लगा| इतनी तेज रोशनी उसने पहले कभी नहीं देखी थी| यह क्या हो रहा था उसके साथ?यह रोशनी का तू□ान था शायद| उसका छोटा सा घोंसला? कहाँ था वह? वह बदहवाश सी हवा में ही हाथ घुमाने लगी और बड़बड़ा ने लगी, " नहीं-नहीं, ऐसा नहीं हो सकता| ये मेरा घोंसला है| इसे संसार की कोई आंधी हिला तक नहीं सकती| रोशनी का तू□ान भी नहीं|" इस बीच धीरज आकर उसके समीप खड़ा हो गया था| वह उसके दोनों कंधे पकड़ झकझोर रहा था और पूछे जा रहा था, "क्या हुआ नेहा? यह तुम क्या बड़बड़ाए जा रही हो? किसका घोंसला? कौनसा तू□ान? धीरज के चिरपरिचित स्वर से नेहा अपनी विचार तन्द्रा से जाग उठी| उसने अपने भावी संसार को वहीं अपनी बाँहों में भर लिया|